प्रतिवेद्य

समक्ष भारतीय सर्वोच्च न्यायालय

सिविल अपीलीय न्यायक्षेत्र

सिविल अपील संख्या 6572/2010

संतोष चतुर्वेदी .... अपीलार्थी(गण)

बनाम

कैलाश चंद्र एवं अन्य .... प्रत्यर्थी(गण)

निर्णय

न्यायमूर्ति, ए.एस. बोपन्ना

1. अपीलार्थी द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 54204/2007 द्वारा पारित आदेश दिनांकित 28.11.2007 को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है। उक्त आदेश के माध्यम से उच्च न्यायालय ने यहां प्रत्यर्थियों द्वारा दायर रिट याचिका की अनुमति दी है और विशेष न्यायाधीश,मथुरा द्वारा पी.ए. अपील सं. 1/2002 में पारित निर्णय

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

और आदेश दिनांक 09.10.2007 को अपास्त किया है, जिसके तहत निर्धारित प्राधिकारी/अपर सिविल न्यायाधीश (सी.डी.) द्वारा पारित आदेश दिनांकित 03.08.2001 को बरकरार रखा गया है। इसलिए, अपीलार्थी इस न्यायालय के समक्ष व्यथित है।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

2. यहाँ अपीलार्थी ने उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किराये पर देने, किराये तथा बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में " किराया अधिनियम" कहा गया है) की धारा 21 (1) (क) के तहत याचिका संस्थित की है, इसमें प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती के विरुद्ध सं. 83/72 ए, तिवारी गली, छट्टा बाजार, मथुरा वाले परिसर को छोड़ने की माँग की गई है। नियत प्राधिकारी के समक्ष वाद को याचिका सं. 6/2000 के रूप में पंजीकृत किया गया था। नियत प्राधिकारी ने विरोधी तर्कों के विचारगत कहा कि अपीलार्थी को सहदायिक संपत्ति पर स्वामित्व का दावा नहीं किया जा सकता है और इस निष्कर्ष पर पहुंचने के आलोक पर कि अपीलार्थी प्रत्यर्थियों का मकान मालिक नहीं है और यह भी मानते हुए कि वास्तविक जरूरत मौजूद नहीं है, के प्रश्न में दुकान/परिसर को मुक्त करने की याचिका को अस्वीकृत कर दिया था।

3. उसी से व्यथित होने का दावा करने वाले अपीलार्थी ने अपीलीय प्राधिकारी नामतः, विशेष न्यायाधीश, मथुरा के समक्ष पी.ए. अपील सं. 1/2002 में अपील दायर की थी। मामले के संपूर्ण स्वरूप की पुनर्मूल्यांकन करने पर विद्वत अपीलीय न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि अपीलार्थी

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

विधिसम्मत संपत्ति का मालिक बन गया था और उस परिस्थिति में प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती को अपीलार्थी के तहत किरायेदार होने पर विचार कर रहा था और वास्तविक आवश्यकता के संबंध में मामले की जांच की गयी। तदनुसार, विद्वत अपीलीय न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि संपत्ति की निर्मुक्ति के लिए मामला बनाया गया है और तदनुसार अपील की अनुमति दी गयी थी। इस मामले के विचारगत, विद्वत अपीलीय न्यायाधीश ने यह भी ध्यान में रखा था कि एक वैकल्पिक दुकान सं. 83/9–सी छट्टा बाजार, मथुरा में स्थित है, जिसकी माप 2.5 फीट x 26 फीट है जो अपीलार्थी के पिता के नाम पर था, जो खाली था और प्रत्यर्थियों के पक्ष में आवंटित होना था, ताकि यदि कोई कठिनाई हो तो उसको कम किया जा सके। उस दृष्टि से, प्रत्यर्थियों को एक माह के भीतर उक्त वैकल्पिक दुकान सं. 83/9–सी पर कब्जा करके विचाराधीन परिसर को खाली करने के लिए निर्देशित किया गया था।

4. उक्त आदेश दिनांक 09.10.2007 से व्यथित होने पर दावा करने वाले प्रत्यर्थियों ने सी.एम.डब्ल्यू.पी. सं. 54204/2007 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत रिट

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

याचिका दायर की थी। विद्वत एकल न्यायाधीश ने वास्तव में इस मामले पर बहुत विस्तार से विचार किया है, विशेष रूप से अपीलार्थी द्वारा किए गए स्वामित्व के दावे के संबंध में और हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि परिसर के प्रश्न के संबंध में अपीलार्थी एक सहदायिक के रूप में विचाराधीन नहीं हो सकता। इसलिए विद्वत एकल न्यायाधीश ने भी इसी तरह का विचार किया है जैसा कि नियत प्राधिकारी/अपर सिविल न्यायाधीश द्वारा किया गया है और उस आलोक में अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को उलट दिया गया है। इसलिए, अपीलार्थी इस अपील में इस न्यायालय के समक्ष व्यथित होने का दावा कर रहा है।

5. हमने अपीलार्थी की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राजीव दत्ता के साथ विद्वान अधिवक्ता श्री विकास सिंह जांगड़ा और प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वत अधिवक्ता सुश्री पूर्णिमा भट को सुना और अपील पत्रों का अवलोकन किया।

6. अपीलार्थी के लिए विद्वत वरिष्ठ अधिवक्ता यह तर्क करेंगे कि किराएदारी अधिनियम के तहत इस मुद्दे पर नियत प्राधिकारियों ने विचार किया था और

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

हालांकि भिन्न–भिन्न मतों को व्यक्त किया गया था, अपीलीय न्यायालय ने वास्तव में इस मामले की सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किया था क्योंकि वर्तमान प्रकृति मकान मालिक और किरायेदार का संबंध स्थापित करने के लिए पर्याप्त था जो वास्तव में स्थापित किया गया था और इसे एक मूल वाद की तरह नहीं माना जाना चाहिए था। नियत प्राधिकार ने संपत्ति के स्वामित्व की जांच की है ताकि इसके निष्कर्ष पर पहुंच सके जैसा कि विभाजन वाद अथवा स्वत्व वाद में माना जा रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थी के पिता ने पूर्व में प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती के विरूद्ध निष्कासन वाद दायर किया था और उसके पश्चात उत्पन्न होने वाली कार्यवाही में विफल रहे थे। हालाँकि, संपत्ति के पारिवारिक समझौते के प्रश्न में जो अपीलार्थी के हिस्से में आई थी और उस परिस्थिति में परिसर की आवश्यकता कार्रवाई का एक ताजा कारण थी और ऐसी परिस्थिति में जहां पहली बार इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं था कि अपीलार्थी के पिता श्री द्वारक प्रसाद चतुर्वेदी मालिक थे, इस तथ्य पर विवाद नहीं हो सकता था कि अपीलार्थी, जो उसका पुत्र है, ने पारिवारिक समझौते में संपत्ति पर स्वामित्व हासिल कर लिया था। उस संबंध में, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया कि जब विद्वत

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

अपीलीय न्यायाधीश, जो अधिनियम के तहत एक वैधानिक प्राधिकारी हैं, मामले की पुनर्मूल्यांकन पर आधारित निष्कर्ष पर पहुंच चुके थे, तो संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका में विचार किया गया था, जैसे कि यह पूरे पहलू का पुनर्मूल्यांकन करके अपील की प्रकृति में था, न्यायोचित नहीं है। इसलिए, उन्होंने तर्क दिया कि स्वामित्व के साथ–साथ वास्तविक आवश्यकताओं की आवश्यकता स्थापित की जा रही है, अपीलार्थी वाद अनुसूची परिसर के सफल और सुरक्षित मुक्ति का हकदार है।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों के लिए विद्वान अधिवक्ता यह तर्क करेंगे कि निर्विवाद स्थिति यह है कि अपीलकर्ता के पिता श्री द्वारका प्रसाद ने दुकान की मुक्ति के लिए किरायेदारी अधिनियम की धारा 21(1)(ए) के तहत याचिका दायर की थी लेकिन मुकदमा नियत प्राधिकारी द्वारा दिनांक 07.12.1979 के फैसले के माध्यम से खारिज कर दिया गया था। उसी के विरूद्ध अपील खारिज कर दी गई और रिट याचिका भी दिनांक 29.10.1999 को खारिज कर दी गई। अपीलार्थी के पिता उत्तरवर्ती होने में विफल रहे तत्पश्चात अपीलार्थी, जो कि उसका पुत्र है, के माध्यम से एक नई कार्यवाही दिनांक 15.11.1999 के कथित समझौते के तहत अपीलार्थी के

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

पक्ष में निश्चित अधिकार बनाते हुए दिनांक 10.02.2000 को गठित की गई। उक्त उद्देश्य के लिए समझौता ज्ञापन दिनांकित 02.02.2000 को बनाया गया था। यह उसका तर्क है कि अपीलार्थी के पिता ने उसके जन्म से पूर्व ही संपत्ति में अपना हिस्सा सुरक्षित कर लिया था और इस तरह की संपत्ति को एक सहदायिकी संपत्ति के रूप में नहीं माना जा सकता है, जिसके तहत अपीलार्थी किसी भी अधिकार का दावा सहदायिक के रूप में कर सकता है और एक हिस्से को सुरक्षित कर सकता है। यह उसका तर्क है कि नियत प्राधिकारी और उच्च न्यायालय ने भी इस पहलू पर विचार किया है और विधिसम्मत इस निष्कर्ष पर पहुंचा है जो हस्तक्षेप की माँग नहीं करता। यह आगे कहा गया है कि विद्वत अपीलीय न्यायाधीश द्वारा निर्दिष्ट वैकल्पिक दुकान व्यावसायिक उद्देश्य के लिए उपयुक्त नहीं है और इसलिए उस संबंध में भी, यदि परिसर मुक्त करने का आदेश दिया गया है तो अपीलार्थी को वास्तविक से पृथक स्थापित नहीं होने पर प्रत्यर्थियों का अधिकाधिक विपत्ति का निरावरण होगा। इसलिए यह तर्क दिया गया कि आक्षेपित आदेश हस्तक्षेप की माँग नहीं करता है।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

8. प्रारम्भतः प्रतिपक्षी तर्कों की पृष्ठभूमि में, अपीलार्थी की ओर से विद्वत वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा अवलम्बित ***शालिनी श्याम शेट्टी एवं अन्य बनाम राजेंद्र शंकर पाटिल*** (2010) 8 एससीसी 329 के मामले में निर्णय का अवलोकन आदेश में होगा। यह मामला विचारक्षेत्र को संदर्भित करता है जो वर्तमान प्रकृति की एक रिट याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा किया जा सकता है। हालांकि, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मामले की जांच करते समय तत्काल मामले में उच्च न्यायालय के दो विचार थे, एक निर्धारित प्राधिकरण द्वारा लिया गया था और दूसरा अपीलीय प्राधिकरण द्वारा जो अलग–अलग थे, उनमें से एक विचार होना आवश्यक था उस संबंध में मामले की जांच करके स्वीकार किया गया। इसलिए, तात्कालिक तथ्यों में यदि मामले के उस पहलू पर ध्यान दिया जाता है, क्योंकि नियत प्राधिकारी ने अपीलार्थी के दावे की जांच करते हुए उस आचरण का उल्लेख किया था जिसमें संपत्ति के स्वामित्व का दावा किया गया था और अपीलार्थी ने यह अवधारित किया था कि एक सहदायिक के रूप में मकान मालिक के रूप में नहीं माना जा सकता स्वीकृत किया जा सकता है, उच्च न्यायालय ने भी इस तरह के दृष्टिकोण को स्वीकार करने के संबंध में विचार किया है। इसलिए वर्तमान

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

परिस्थिति में क्षेत्राधिकार की सीमा की जांच करने के बजाय, इस न्यायालय द्वारा जिस पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है, वह यह है कि क्या नियत प्राधिकारी द्वारा विचार की प्रकृति के रूप में अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पहुंचे निष्कर्ष के विरूद्ध उच्च न्यायालय भी न्यायोचित है और जो भिन्न–भिन्न मतों में से स्वीकृत किया जाना है।

9. मामले के उस पहलू की जांच करने के लिए कागजात के अवलोकन से संकेत मिलता है कि प्रथम बार अपीलार्थी श्री द्वारका प्रसाद के पिता दिनांक 09.07.1959 के विभाजन विलेख के तहत संपत्ति के मालिक बन गए थे। उस स्थिति में, प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती उनके अधीन किरायेदार थे और उक्त श्री द्वारका प्रसाद ने दिनांक 10.03.1979 को प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती के विरूद्ध निष्कासन याचिका दायर की। उक्त कार्यवाही में संपत्ति के स्वामित्व के संबंध में अथवा अपीलार्थी के पिता और प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती के बीच मकान मालिक और किरायेदार के विधिक संबंध में कोई विवाद नहीं था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थी के पिता उक्त कार्यवाही में विफल रहे थे और वर्तमान में याचिका सं. 6/2000 को अपीलार्थी, जो उसका पुत्र है जो संपत्ति का मालिक होने का दावा करता है, द्वारा दायर की गई थी।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

बेदखली के मुकदमे का विरोध करने के लिए प्रत्यर्थियों द्वारा उत्पन्न किया गया संपूर्ण मामला संपत्ति की स्थिति के संबंध में है कि दिनांक 09.07.1959 को हिंदू अविभाजित परिवार के अन्य सदस्यों और अपीलार्थी के पिता और के बीच विभाजन हुआ तो संयुक्त परिवार की संपत्ति ने अपनी प्रतिष्ठा खो दिया था। इसलिए, यह तर्क दिया गया कि वर्ष 1977 में पैदा होने वाले अपीलार्थी को एक सहदायिक नहीं माना जा सकता। उस आलोक में यह तर्क दिया गया कि ऐसी परिस्थिति में जहां अपीलार्थी एक सहदायिक नहीं था, वह संपत्ति के मालिक के रूप में दावा करने के लिए दिनांकित 15.11.1999 के समझौते में कथित परिवार के संपत्ति में हिस्सा नहीं ले सकता था। इस तरह के तर्क को यहाँ प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए आग्रह के रूप में नियत प्राधिकारी के साथ–साथ उच्च न्यायालय में विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा स्वीकृत किया गया है।

10. उक्त कथनों का उल्लेख करते हुए, इस बात पर जोर देना आवश्यक है कि किरायेदारी अधिनियम के तहत कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति की है, जिसमें मकान मालिक और किरायेदार के विधिक संबंध को इस तरह की निष्कासन याचिका और स्वामित्व की जांच की कठोरता पर विचार करने के लिए उस

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

सीमा तक ध्यान दिया जाना अपेक्षित है कि उस तरीके में लिप्त नहीं होना चाहिए जैसा कि एक मूल वाद में किया गया है जब तक कि प्रतिवादी बहुत किराए की संपत्ति के लिए शीर्षक स्थापित नहीं करता है जो मकान मालिक के प्रतिकूल है। कार्यवाही की पहल पर नियत प्राधिकारी उसी के प्रति सचेत प्रतीत होता है और उक्त पहलू स्पष्ट होगा यदि नियत प्राधिकारी द्वारा विचार के लिए तैयार किए गए मुद्दों की प्रकृति पर ध्यान दिया जाए, जो निम्नलिखित रूप से हैं:

1. क्या याचिकाकर्ता के पास अपना व्यवसाय चलाने के लिए विवादित दुकान की उचित और वास्तविक आवश्यकता है?

2. क्या याचिकाकर्ता को उत्पन्न होने वाली कठिनाइयाँ प्रत्यर्थी को उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों की तुलना में अधिक है, यदि प्रत्यर्थी को विवादित दुकान मुक्त की जा रही हो।

हालांकि, विचार उसी के परे विस्तारित हुआ है और इसलिए सवाल यह है कि क्या यह तात्कालिक तथ्यों में न्यायोचित है।

11. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि संपत्ति का स्वामित्व नियत प्राधिकारी द्वारा विचार के लिए एक मुद्दे के रूप में नहीं उठाया गया था, लेकिन उपयुक्त रूप से किरायेदारी अधिनियम के तहत मामले जो अपेक्षित थे, बनाये गए थे।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

यद्यपि यह स्थिति थी कि साक्ष्य की आवश्यकता को ध्यान दिया गया था और संपत्ति की प्रकृति और स्थिति के संबंध में नियत प्राधिकारी द्वारा अभिलिखित तर्क यहां निम्नलिखित रूप से बताया गया है:

> "वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता को यह साबित करना था कि विवादित संपत्ति संयुक्त हिंदू परिवार की एक सहदायिक संपत्ति थी। इस संदर्भ में, याचिकाकर्ता ने कोई अभिलेख प्रस्तुत नहीं किया था जिसमें विवादित संपत्ति को एक सहदायिक संपत्ति दिखाया गया है। याचिकाकर्ता के पिता ने स्वयं विवादित दुकान को मुक्त करने के लिए वर्ष 1979 में प्रत्यर्थी के विरूद्ध याचिका दायर की थी, जिसमें भी, उन्होंने स्वयं को विवादित संपत्ति का मालिक और मकान मालिक घोषित किया था और उन्होंने ऐसा कोई बयान नहीं दिया है कि वह स्वयं परिवार के कर्ता के सामर्थ्य में हिंदू संयुक्त परिवार के सहदायिकी संपत्ति के मालिक थे और सम्पत्ति के मालिक और मकान मालिक हैं। इसके अलावा, पेपर सं. 33 जी/22 (कोली) (लागायत) 26 के अवलोकनार्थ, जो प्रत्यर्थी की ओर से दायर किया गया है और नगर निगम के मूल्यांकन की एक प्रति है, कि विवादित संपत्ति मालिक के रूप में द्वारका प्रसाद के नाम पर पंजीकृत किया गया था और इसमें श्याम बिहारी को दुकान में किरायेदार के रूप में दिखाया गया है, और उपरोक्त अभिलेख में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है कि परिवार के कर्ता के सामर्थ्य में द्वारका प्रसाद विवादित संपत्ति के मालिक थे। इसके अतिरिक्त, बिजली बिल पेपर सं. 33 जी/27 द्वारका प्रसाद के नाम पर है। सभी परिस्थितियों के अवलोकन के पश्चात, मेरी राय है कि याचिकाकर्ता यह साबित करने में विफल रहा है कि उपरोक्त विवादित दुकान संयुक्त हिंदू परिवार की एक सहदायिक संपत्ति है।"

12. जैसा कि ऊपर ध्यान दिया गया है नियत प्राधिकारी द्वारा किया गया विचार, शीर्षक की प्रकृति में विभाजन के लिए अथवा शीर्षक की घोषणा के लिए वाद में जांच की जा रही है। वास्तव में उपरोक्त निष्कर्ष के अलावा नियत प्राधिकारी यह संकेत देने की सीमा तक चले गए हैं कि जैसे कि दिनांकित 15.11.1999 को पारिवारिक समझौता एक न्यायसंगत विभाजन

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

नहीं था और उसी के तहत दावा किए गए अधिकार को अभियोग के प्रारम्भिक चरण में स्वीकृत नहीं किया जा सकता, जब श्री द्वारक प्रसाद ने निष्कासन के लिए वाद दायर किया तब उन्होंने संपत्ति को एक सहदायिक संपत्ति के रूप में संदर्भित नहीं किया था, लेकिन उसी पर पूर्ण अधिकार का दावा किया था।

13. इस तरह के निष्कर्ष के विरूद्ध, विद्वत अपीलीय न्यायाधीश ने ध्यान दिया है कि अपीलार्थी के पिता श्री द्वारका प्रसाद ने दिनांक 09.07.1959 को एक पंजीकृत विभाजन के तहत संपत्ति को प्राप्त किया था और उस आलोक में विधिक स्थिति के दृष्टिगत सहदायिक संपत्ति में एक हिस्सा प्राप्त किया है जो तीन पीढ़ियों के लिए ऐसे रहेगी। विद्वत अपीलीय न्यायाधीश ने निम्नलिखित तरीके से निष्कर्ष निकाला है:

> "उपरोक्त चर्चाओं के आधार पर, यह बहुत स्पष्ट और जाहिर है कि विचाराधीन दुकान द्वारका प्रसाद के हाथों में एक सहदायिक संपत्ति थी और आवेदक संतोष चतुर्वेदी उनके पुत्र होने के नाते उक्त सहदायिक संपत्ति में अधिकार, ब्याज और हिस्सेदारी मिली है। अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से पता चलता है कि द्वारका प्रसाद, उनके पुत्रों और माँ के बीच दिनांक 15.11.1999 को दुबारा पारिवारिक समझौता हुआ और इस पारिवारिक समझौते के कारण, पारिवारिक दावे और विवाद उत्पन्न हुआ और इस कारण संतोष चतुर्वेदी और उनकी मां, पिता और भाई के बीच दिनांक 09.04.1997 को उक्त संपत्ति की पुनर्विभाजन हुआ, जो दिनांक 02.02.2000 को ज्ञापन पर लिखा गया था। लिखित ज्ञापन भी अभिलेखों पर दायर किया गया था और एक मूल वाद सं. 220/01 संतोष चतुर्वेदी बनाम द्वारका

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

प्रसाद एवं अन्य को उस संपत्ति के विभाजन के संदर्भ में दायर किया गया था जो सुलह के आधार पर दिनांक 19.04.2001 को तय किया गया था।

यह श्याम बिहारी के विद्वत अधिवक्ता का तर्क है कि सभी प्रकथन मनगढ़ंत हैं और मामले को रंग देने के लिए बस तैयार किए गए हैं, मैं इस तर्क से संतुष्ट नहीं हूं। क्योंकि, साक्ष्य अभिलेख पर दर्ज किए गए हैं कि द्वारका प्रसाद और उनके पुत्रों विजय और संतोष चतुर्वेदी और उनकी मां के बीच दिनांक 15.11.1999 को मौखिक विभाजन हुआ था, जो कि दिनांकित 02.02.2000 को पारिवारिक समझौते का ज्ञापन द्वारा लिखित रूप में घटा दिया गया था, जिसकी पुष्टि मूल वाद सं. 220/01 की डिक्री द्वारा की गई थी। इस बिंदु पर अच्छी तरह से गठित कानून है कि हिंदू परिवारों के सदस्यों के बीच विभाजन मौखिक हो सकता है और लिखित भी हो सकता है। हिंदू कानून बहुत स्पष्ट है कि यदि एक सहदायिक विभाजन के लिए अपनी इच्छा व्यक्त करता है तो कानूनी रूप से सहदायिकी संपत्ति का विभाजन/विच्छेद उसी दिन से अपना प्रभाव डालता है अर्थात जिस दिन से सहदायिक ने विभाजन की अपनी इच्छा व्यक्त की थी।"

14. यद्यपि संपत्ति के अधिकार की प्रकृति के संबंध में इस तरह की विस्तृत जाँच वर्तमान मामले में की गई है, हमारे विचार हैं कि वर्तमान प्रकृति की एक संक्षिप्त कार्यवाही में पूर्णतः अनावश्यक थी जब किरायेदार ने विचाराधीन परिसर के लिए शीर्षक स्थापित नहीं किया था। इस तथ्य के निरपेक्ष कि क्या संपत्ति सहदायिक संपत्ति थी अथवा श्री द्वारका प्रसाद की पूर्ण संपत्ति बन गई थी, तथ्य यह है कि 15.11.1999 दिनांकित को एक पारिवारिक समझौता हुआ था, जिसमें श्री द्वारक प्रसाद जो मालिक जो स्वयं एक पक्ष थे और अपने पुत्र को अपनी संपत्ति का एक हिस्सा प्रदान किया था। इस तरह के मौखिक पारिवारिक समझौते 15.11.1999 दिनांकित के अनुवर्ती एक

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

ज्ञापन भी दिनांक 02.02.2000 को तैयार किया गया था। इसके बाद अपीलार्थी ने एक मूल वाद सं. 220/2001 भी दायर किया था, जिसमें पारिवारिक समझौते को वैध घोषित करने की माँग की गई थी। उक्त वाद का निपटान दिनांक 19.04.2001 को सुलह के आधार पर किया गया था।

15. क्या श्री द्वारक प्रसाद द्वारा अपीलार्थी को दिया गया हिस्सा, जो उसका पुत्र है, उचित है अथवा क्या उस दस्तावेज की प्रकृति जिसके तहत समझौता अभिलिखित किया गया था, कानून की आवश्यकता के अनुसार था और सभी वैध मुद्दे जो केवल परिवार के किसी अन्य सदस्य द्वारा उठाए जा सकते हैं जो वंचित महसूस करेंगे और ऐसी संपत्ति पर अधिकार का दावा कर सकते थे। लेकिन ऐसी परिस्थिति में जहां श्री द्वारका प्रसाद ने, जो कि संपत्ति के मालिक थे, अपीलार्थी के पक्ष में समझौता किया था, जो उनका पुत्र है, इस प्रकार अर्जित शीर्षक, किसी भी प्रसंग में, व्यक्ति द्वारा विचाराधीन नहीं कहा जा सकता जो परिसर में एक किरायेदार के रूप में है, जब श्री द्वारका प्रसाद जो कि उनके मकान मालिक थे, उनके मकान मालिक होने का दावा करना जारी नहीं रखते थे। यदि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा समुचित ढंग से अवलोकन की गई स्थिति हो, तो संपत्ति हस्तांतरण

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

अधिनियम की धारा 8 और धारा 109 में निहित प्रावधान के मद्देनजर, मालिक द्वारा संपत्ति के हस्तांतरण पर किरायेदार स्वचालित रूप से हस्तांतरी किरायेदार बन जाएगा। मकान मालिक और किरायेदार के संबंध को ध्यान देने के लिए अपने आदेश में अपीलीय प्राधिकारी का आगे का अवलोकन इस प्रकार है:

> "..... भले ही, श्याम बिहारी लाल ने खुद को आवेदक का किरायेदार होने से इनकार कर दिया हो, लेकिन यहाँ यह अधिक महत्वपूर्ण है कि किरायेदार श्याम बिहारी लाल के निष्कासन के लिए पक्षों के बीच एक अन्य वाद लंबित था, जहां श्याम बिहारी लाल ने स्वयं को संतोष चतुर्वेदी का किरायेदार होने के लिए स्वीकार किया था और मुकदमे की सुनवाई की पहली तारीख को किराया जमा किया था और उस मामले में उसने अधिनियम सं.13/72 की धारा 20(4) का लाभ देने के लिए भी अनुरोध किया था।"

यह इंगित करेगा कि इस समयबिंदु पर प्रत्यर्थी संपत्ति अथवा विधिक संबंध पर अपीलार्थी के स्वामित्व पर विवाद नहीं कर सकते।

16. जिस पहलू पर भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है, वह यह है कि प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती स्वर्गीय श्याम बिहारी ने किराया नियंत्रण एवं बेदखली अधिकारी, मथुरा के समक्ष वाद सं. 113/2011 (अनुलग्नक R-12) में कार्यवाही प्रारम्भ की थी जिसमें उन्होंने यह दर्शाते हुए वैकल्पिक परिसरों के आवंटन की मांग की थी कि उनके विरूद्ध अपीलार्थी द्वारा वाद सं . 6/2010 के तहत सूत्रपात किया गया था। प्रथम उदाहरण यह इंगित करता

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

है कि प्रत्यर्थियों के पूर्ववर्ती के पास स्वामित्व के संबंध में कोई मुद्दा नहीं था और वैकल्पिक परिसर को सुरक्षित करने का प्रयास कर रहे थे, लेकिन केवल इसके बाद संबंध निर्विवाद होते हुए भी विवाद को उठाया गया है। इसलिए, इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि अपीलीय न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया दृष्टिकोण वर्तमान तथ्यों और परिस्थितियों में उचित है।

17. उपरोक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद हमने संपत्ति को मुक्त करने के लिए अपीलार्थी द्वारा किए गए दावे की प्रकृति को ध्यान में रखा है। जैसा कि प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों से, अपीलार्थी ने तर्क दिया था कि वह कपड़े का थोक व्यवसाय कर रहा है, जिसके लिए उसके पास परिसर नहीं है, जिसके कारण उसे, उसकी पत्नी और दो बच्चों को परेशानी हो रही है। ऐसी परिस्थिति में जहां यह बताने के लिए अभिलेख पर कोई तथ्य उपलब्ध नहीं है कि अपीलार्थी के पास कोई अन्य वैकल्पिक परिसर है, जैसा कि दावा किया गया है कि अपीलार्थी की वास्तविक आवश्यकता को स्वीकार करना होगा और भले ही प्रत्यर्थियों को कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ेगा, यदि परिसर अपीलार्थी को जारी नहीं किया जाता है तो उसी की तुलना में

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

अपीलार्थी द्वारा सामना की जाने वाली कठिनाई अधिक होगी। यद्यपि इस बिंदु पर प्रत्यर्थियों के लिए विद्वत अधिवक्ता यह प्रस्तुत करेंगे कि यह उपयुक्त नहीं है कि वैकल्पिक परिसर सं. 83/9–सी छट्टा बाजार, मथुरा को प्रत्यर्थियों को उपलब्ध कराने का आदेश दिया गया है, यह वास्तव में केवल अपीलीय न्यायालय द्वारा कठिनाई को कम करने के लिए किया गया एक आदेश है। उस परिस्थिति में, यदि उक्त परिसर उपयुक्त नहीं है, तो यह प्रत्यर्थियों के ऊपर है कि वे इसका विकल्प न चुनें। हालांकि, जब अपीलार्थी ने स्थापित किया है कि वह संपत्ति का मालिक है और उसके सद्भावनापूर्वक व्यवसाय के लिए भी आवश्यक है कि किसी भी हालत में परिसर को मुक्त करने की आवश्यकता है।

18. उस दृष्टि से, ऊपर बताए गए सभी कारणों के लिए हमारा विचार है कि निर्धारित प्राधिकारी के साथ–साथ उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश को उनके निष्कर्ष में उचित नहीं ठहराया गया था। तदनुसार, दिनांक 03.08.2001 को याचिका सं. 6/2000 में पारित निर्णय और C.M.W.P. सं. 54204/2007 में पारित दिनांक 28.11.2007 के निर्णय को अपास्त किया गया है। परिणामस्वरूप, पी.ए. अपील सं. 1/2002 में

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

पारित 09.10.2007 दिनांकित का निर्णय बहाल किया गया है। प्रत्यर्थियों को तीन माह का समय दिया जाता है और तीन माह की अवधि के भीतर इस न्यायालय के समक्ष दायर किए जा रहे एक उपक्रम के अधीन अपीलार्थियों को तिवारी गली, छट्टा बाजार, मथुरा में स्थित परिसर सं. 83/72A को खाली करें और कब्जा सौंप दें। यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि इस तरह के उपक्रम को खाली करने के लिए दिए गए समय का लाभ दाखिल नहीं किया जाता है, तो प्रत्यर्थियों को उपलब्ध नहीं होगा। इसके अलावा, विचाराधीन परिसर की मुक्ति वैकल्पिक परिसर के लिए चयन करने के बावजूद की जाएगी जैसा कि अपीलीय न्यायालय द्वारा आदेश दिया गया है।

19. तदनुसार अपील को अनुमति दी जाती है। लागत के अनुसार कोई आदेश नहीं होगा। सभी लंबित आवेदनों का निपटारा किया जाएगा।

.....

(न्यायमूर्ति आर. भानुमती)

.....

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना)

.....

(न्यायमूर्ति हृषिकेश रॉय)

नई दिल्ली,

15 नवंबर, 2019

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।